आई.एल.आर. पंजाब और हरियाणा
(212-225)

न्यायमूर्ति जे.एस. सेखों और एस.एस. राथर के समक्ष

धर्मपाल छाछिया. –याचिकाकर्ता

बनाम

संयुक्त सचिव (सहकारिता), हरियाणा और अन्य, - प्रतिवादी

1991 की सिविल रिट याचिका संख्या *6215*

-18 नवंबर, 1991.

पंजाब सहकारी सोसायटी अधिनियम, 1961 *(*जैसा कि हरियाणा में लागू है*)* - धारा 54, 55 और 56- गबन- मध्यस्थता का संदर्भ-सोसायटी धारा 55/56 के तहत मध्यस्थता का दावा कर रही है - आपराधिक कार्यवाही भी शुरू हुई, जिसका परिणाम बरी हो गया - लंबित मध्यस्थता कार्यवाही पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना विभागीय कार्रवाई भी की गई - चेतावनी जारी की गई - मध्यस्थता में, दोषी कर्मचारी पर दायित्व एकत्र की गई सामग्री के आधार पर तय किया जाता है न कि ऑडिट रिपोर्ट के आधार पर - मामला धारा 54 के तहत नहीं बल्कि धारा 55 के तहत आता है - सोसायटी द्वारा धारा 55/56 के तहत मध्यस्थता का संदर्भ सही दावा किया गया है।

यह अभिनिर्णीत किया गया कि मद्रास अधिनियम की धारा 49 और 51 का पंजाब के धारा 54 और 55 का संयुक्त वाचन करें तो यह सच है कि वे कुछ हद तक एनालोगॉस हैं लेकिन सख्ती से नहीं। मद्रास अधिनियम के तहत, किसी पीड़ित व्यक्ति के लिए न्यायिक प्रकृति के जिला न्यायालय के समक्ष उपचार उपलब्ध है, जबकि पंजाब के तहत ऐसा कोई प्रावधान उपलब्ध नहीं है।

जैसा कि ओम प्रकाश चोपड़ा[1] और जय पाल[2] के मामलों में देखा गया है, यह कहना सही नहीं है कि प्रावधान समान हैं। इन दोनों मामलों का निर्णय इस धारणा पर किया गया है और दूसरे पक्ष द्वारा स्वीकार किया गया है कि कार्यवाही क्रमशः ऑडिट रिपोर्ट या स्टॉक के सत्यापन पर पाई गई कमी के आधार पर शुरू की गई थी।

(पैरा 8)

यह *अभिनिर्णीत किया गया* कि जहां यह दिखाने के लिए तथ्य रिकॉर्ड पर नहीं रखे गए थे कि अकेले ऑडिट रिपोर्ट के आधार पर याचिकाकर्ता पर दायित्व तय किया गया था, आश्चर्यजनक रूप से, इस रिट में और साथ ही इस पुनरीक्षण प्राधिकारी पर ऐसी कोई याचिका नहीं ली गई है।

(पैरा10)

यह अभिनिर्णीत किया गया कि सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी के मद्देनजर पंजाब अधिनियम के अध्याय VIII की धारा 48 (ऑडिट), 49 (सोसाइटियों का निरीक्षण), 50 (रजिस्ट्रार द्वारा पूछताछ), 51 (ऋणग्रस्त सोसाइटियों की पुस्तकों का निरीक्षण) उपरोक्त एकल पीठ के निर्णयों में इस पर ध्यान नहीं दिया गया है। यदि उपरोक्त धाराओं के तहत कार्यवाही के दौरान धोखाधड़ी, गबन या कमी की कुछ अवैधता पाई जाती है और एकत्र की गई आपत्तिजनक सामग्री को सोसायटी द्वारा अपने दावे का एकमात्र आधार बनाया जाता है, तो निश्चित रूप से, यह कहा जा सकता है कि धारा 54 लागू होगी लेकिन यदि उपरोक्त धाराओं के तहत विचार की गई किसी भी कार्यवाही के दौरान एकत्र किए गए तथ्यों को सोसायटी द्वारा किए गए दावे में नहीं रखा जाता है, तो धारा 55 लागू होगी। उदाहरण के लिए, यदि सोसायटी संदर्भ चाहती है और मध्यस्थता कार्यवाही के दौरान, यह कुछ ऑडिटर निरीक्षण रिपोर्ट, या अन्य सबूतों के साथ-साथ कुछ अन्य जांच रिपोर्ट पर निर्भर करती है, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि उस स्थिति में, मामला खत्म हो जाएगा। केवल

---

1 ओम प्रकाश चोपड़ा बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य 1988 पी.एल.जे. 263

2 जय पाल बनाम हरियाणा राज्य 1984, पी.एल.जे. 8

अधिनियम की धारा 54 के तहत कवर करने योग्य होगा। यदि इस न्यायालय के उपरोक्त दो निर्णयों में इस तरह के दृष्टिकोण पर विचार किया गया था, तो वे पेंटाकोटा श्रीरामुला[3] मामले में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों के विपरीत हैं।

(पैरा 13 एवं14)

यह अभिनिर्णीत किया गया कि पेंटाकप्टा श्रीरामुला मामले (सुप्रा) में सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणियाँ पूरी तरह से मामले के तथ्यों पर लागू होती हैं और हम मानते हैं कि मध्यस्थता कार्यवाही के संदर्भ का समाज द्वारा पंजाब अधिनियम की धारा 55/56 के अंतर्गत सही दावा किया गया था और रजिस्ट्रार द्वारा ऐसा आदेश दिया गया था ।

(पैरा15)

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत सिविल रिट याचिका में प्रार्थना की गई है कि माननीय न्यायालय कृपया:

(i) विवादित आदेश, दिनांक 28 जुलाई, 1982 (पी-8), दिनांक 30 जुलाई ,1983 (पी-9), अपीलीय आदेश दिनांक 24 मई , 1985 (पी-10) को रद्द करने के लिए उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश जारी करें। आदेश दिनांक 1 फरवरी, 1990 (अनुलग्नक पी-11), सहायक रजिस्ट्रार सहकारी समितियां, रोहतक द्वारा पारित पुरस्कार दिनांक 24 दिसंबर, 1981 (पी-7) को बहाल करते हुए - जिसके आधार पर याचिकाकर्ता को 17,839.95 रुपये की राशि के दायित्व से पूरी तरह से दोषमुक्त कर दिया गया था और घोषित करें कि याचिकाकर्ता उक्त राशि के लिए उत्तरदायी नहीं है।

---

[3] पेंटाकोटा श्रीरामुला वी. को-ऑपरेटिव मार्केटिंगसोसाइटी लिमिटेड, अनाकापल्ली और अन्य एयर 1965 एस.सी.62

(ii) प्रतिवादी संख्या 2 को निर्देश जारी करें कि याचिकाकर्ता की स्थिति को उस तारीख से सहायक के रूप में बहाल किया जाए जब उसे पदोन्नत किया गया था, - आदेश दिनांक 21 दिसंबर, 1978 (पी-1) के तहत और वह सहायक के पद से जुड़े सभी लाभों का हकदार है।

(iii) कोई अन्य राहत प्रदान करें जो माननीय न्यायालय मामले की परिस्थितियों के तहत उचित और उपयुक्त समझे;

(iv) पी-1 से पी-11 की प्रमाणित प्रतियां दाखिल करना , और उत्तरदाताओं को अग्रिम नोटिस की सेवा से मुक्त किया जाए;

(v) याचिकाकर्ता के पक्ष में लागत सहित रिट याचिका की अनुमति दी जाए ।

आगे प्रार्थना की गई है कि वर्तमान रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान, प्रतिवादी अधिकारियों को न्याय,समानता और

निष्पक्षता के लिए याचिकाकर्ता से कथित राशि की वसूली करने से रोका जाए।

श्री वी.पी. शर्मा, याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता

श्री सी.बी. गोयल, श्री जे.बी. टाकोरिया और श्री के.एस. कुंडू, उत्तरदाताओं की ओर से अधिवक्ता

निर्णय

न्यायमूर्ति एस.एस. राठौड़ ,

(1) गन्नौर को-ऑपरेटिव मार्केटिंग सोसायटी लिमिटेड, (प्रतिवादी नंबर 4) ने हरियाणा (इसके बाद 'अधिनियम' कहा जाएगा) पर लागू 'पंजाब सहकारी सोसायटी अधिनियम, 1961' की धारा 55/56 के तहत मध्यस्थता मामले में संदर्भित रुपये 17,839.95 मूल राशि के रूप में और रु. 31 जनवरी 1980 तक 14% प्रति वर्ष की दर से रुपये 1,083.40 ब्याज के रूप में , पूर्व प्रबंधक धरम पाल (रिट याचिकाकर्ता) और एक श्री झाबर (प्रतिवादी नंबर 5) के खिलाफ कुल मिलाकर रु.18,923.35 की मांग उठाई । मध्यस्थता की मांग के साथ-साथ, सोसायटी ने याचिकाकर्ता श्री धर्मपाल के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही भी शुरू की। जिला प्रबंधक हैफेड सोनीपत ने पुलिस को शिकायत भेजी जिसके आधार पर एफ.आई.आर. सहित आपराधिक मामला दर्ज किया गया। क्रमांक 137 दिनांक 26 अगस्त 1979 को आरोपी धर्मपाल के विरुद्ध धारा 467/471/ 406/409 आई.पी.सी. के तहत अपराध पंजीबद्ध किया गया; इस प्रकार, पीड़ित पक्ष द्वारा आपराधिक कार्यवाही के साथ-साथ मध्यस्थता की कार्यवाही भी शुरू की गई। सोसायटी पर एक साथ एक जैसे आरोप हैं जिनका विवरण इस प्रकार है :-

(1) कि श्री धर्मपाल, पूर्व प्रबंधक ने रुपये 9,613.80 पैसे का फर्जी झूठा बिल तैयार किया और ठेकेदार के रूप में काम कर रहे श्री झाबेर को भुगतान दिखाना। प्रश्नगत भुगतान 70 पैसे की दर से 13,734 बैग की लोडिंग अनलोडिंग और कार्टेज से संबंधित है। श्री झाबेर ने मौखिक रूप से पूर्व प्रबंधक श्री धर्मपाल से कोई धन प्राप्त करने से इनकार किया है।

(2) पूर्व प्रबंधक श्री धर्मपाल ने रुपये 2,496.79 पैसे की अग्रिम राशि ली थी जो राशि वापिस नहीं आयी और अभी भी सोसायटी के रिकॉर्ड में उनके नाम पर खड़े हैं।

(3) एफ.सी.आई. से 4,874.65 पैसे की कटौती की गई, जिसे श्री झाबेर से वसूली योग्य दर्शाया गया है

(4) कि 854.71 रुपये के मूल्य की कमी है, इस प्रकार, कुल रु. 17,839.95

(2) दिनांक 24 दिसम्बर के आदेश द्वारा 1987 रजिस्ट्रार ने मध्यस्थ के रूप में कार्य करते हुए सोसायटी को याचिकाकर्ता को आदेश से मुक्त करने से इनकार कर दिया, सोसायटी (प्रतिवादी संख्या 4) ने अनुमति दे दी और मामले को उप सचिव द्वारा अपने आदेश दिनांक 28 जुलाई, 1982 (प्रश्न में संलग्न मध्यस्थता मामला) के आदेश में वापस भेज दिया गया। श्री सीस द्वारा दिनांक 30 जुलाई, 1983 को निर्णय लिया गया था, रु -सहकारी समितियां, रोहतक: (अनुलग्नक 'याचिकाकर्ता को केवल एन पैसे के आरोप से मुक्त किया गया था। अन्य आरोपों के संबंध में, याचिकाकर्ता। याचिकाकर्ता ने इस आदेश के खिलाफ व्यथित महसूस करते हुए (अनुलग्नक पी-9) एक अपील दायर की जिसका श्री जे.सी. ने निपटारा कर दिया। कंवर, अतिरिक्त रजिस्ट्रार (विपणन), - आदेश दिनांक 24 मई, 1985 (अनुलग्नक पी -10) द्वारा। इस अपील में, याचिकाकर्ता पर आरोप संख्या 4 के तहत दायित्व भी तय किया गया था और इस तरह, सोसायटी का पूरा दावा सोसायटी के पक्ष में 17,839.95 पैसे की मूल राशि प्रदान की गई। इस आदेश के खिलाफ, याचिकाकर्ता द्वारा सरकार के समक्ष एक पुनरीक्षण याचिका दायर की गई थी, जिसे श्री दलीप सिंह, संयुक्त सचिव, सहकारिता विभाग ने आदेश दिनांक के तहत खारिज कर दिया था। 1 फरवरी, 1990 (अनुलग्नक पी-11)।

(3) यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि , दिनांक 1 अक्टूबर, 1983 (अनुलग्नक पी -4) के फैसले के तहत, न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, सोनीपत ने याचिकाकर्ता को 3 नवंबर, 1980 के उपरोक्त आपराधिक मामले संख्या 271/2 में बरी कर दिया जो पुलिस थाना गन्नौर की एफ.आई.आर. नंबर 137, दिनांक 26 अगस्त, 1979 से उत्पन्न हुआ। न्यायिक मजिस्ट्रेट ने याचिकाकर्ता को मुख्य रूप से इस आधार पर बरी कर दिया कि मध्यस्थता कार्यवाही और आपराधिक कार्यवाही एक ही तथ्य पर एक साथ नहीं चल सकती हैं और आगे कहा कि, - *24* दिसंबर, 1981 (एक्स 01) के फैसले के तहत, याचिकाकर्ता को पहले ही दोषमुक्त कर दिया

गया था।विद्वान मजिस्ट्रेट की ये टिप्पणियाँ प्रथम दृष्टया सही नहीं हैं, खासकर तब जब 24 दिसंबर 1981 के उक्त फैसले को अपील में रद्द कर दिया गया था और मामले की रिमांड के बाद, 30 जुलाई, 1983 (अनुलग्नक पी-9) के आदेश के तहत मध्यस्थता कार्यवाही में याचिकाकर्ता पर दायित्व तय किया गया था। मामला यहीं शांत नहीं होता, भले ही याचिकाकर्ता ने बरी होने का गलत आदेश प्राप्त कर लिया हो , फिर भी उसके खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू की गई और - दिनांक 1 जुलाई, 1990 (अनुलग्नक पी -6) के आदेश के तहत, हैफेड के प्रबंध निदेशक ने अपने चरित्र में चेतावनी की सजा दी। याचिकाकर्ता के रोल और विशेष रूप से मध्यस्थता कार्यवाही की लंबितता को सजा के बिंदु पर कम करने वाली परिस्थिति के रूप में ध्यान में रखा गया, एक और टिप्पणी के साथ कि यह विभागीय कार्रवाई लंबित मध्यस्थता कार्यवाही पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना की जा रही थी ।

(4) मध्यस्थता कार्यवाही में पारित उपरोक्त आदेशों की पृष्ठभूमि में, याचिकाकर्ता ने 24 अप्रैल, 1991 को यह रिट याचिका दायर की, जिसमें आक्षेपित आदेश अनुलग्नक पी-8, पी-9, पी-10 और पी-11 को चुनौती दी गई।

(5) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील श्री वी.पी. शर्मा ने तर्क दिया है कि ऑडिट रिपोर्ट के आधार पर याचिकाकर्ता पर दायित्व तय किया गया है। याचिकाकर्ता सोसायटी का पूर्व प्रबंधक है, इसलिए उसके खिलाफ पंजाब सहकारी सोसायटी अधिनियम, 1961 (हरियाणा पर लागू) की धारा 55 के बजाय केवल धारा 54 के तहत कार्रवाई की जा सकती है।संक्षेप में, उनका कहना है कि मामले को मध्यस्थता के लिए नहीं भेजा जा सकता। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने जय पाल बनाम हरियाणा राज्य *(सुप्रा)* और ओम प्रकाश चोपड़ा बनाम हरियाणा राज्य और अन्य *(सुप्रा)* के रूप में रिपोर्ट किए गए दो एकल पीठ निर्णयों पर भरोसा किया है। पूर्व फैसले में, न्यायमूर्ति जे.एम. टंडन (जैसा कि वह तब थे) ने सुप्रीम कोर्ट के पेंटाकोटा श्रीरामुला बनाम

सहकारी विपणन सोसायटी लिमिटेड अनाकापल्ली और अन्य,(सुप्रा) के रूप में रिपोर्ट किए गए फैसले पर भरोसा जताया था।

(6)श्री शर्मा द्वारा उठाए गए सवाल की वैधता की जांच करने से पहले, उपरोक्त उदाहरणों का विश्लेषण करना आवश्यक है। जहां तक उपरोक्त एकल पीठ के निर्णयों का संबंध है, यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय के समक्ष कोई विवाद नहीं था कि केवल ऑडिट रिपोर्ट के आधार पर सोसायटी के दोषी अधिकारी पर दायित्व तय किया गया है। जय पाल के मामले *(सुप्रा)* में , 1 जुलाई, 1975 से 30 जुलाई, 1977 की अवधि के लिए सोसायटी के खातों का ऑडिट इंस्पेक्टर द्वारा ऑडिट किया गया था और ऑडिट प्रक्रिया के दौरान, रुपये 58,093.34 पैसे का का गबन हुआ पता चला था। पेंटाकोटा श्रीरामुला मामले (सुप्रा) में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों पर भरोसा करते हुए, न्यायमूर्ति जे.एम. टंडन का विचार था कि मद्रास सहकारी सोसायटी अधिनियम 1932 (संक्षेप में 'मद्रास अधिनियम') की धारा 49 और 51 के प्रावधान पंजाब सहकारी अधिनियम, 1961 (संक्षेप में पंजाब अधिनियम जैसा कि हरियाणा पर लागू होता है) की धारा 54 और 55 के प्रावधानों के अनुरूप हैं। और आगे मामले का निर्णय करते समय, विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपने आधिपत्य की निम्नलिखित टिप्पणियों को ध्यान में रखा: -

> बनाम सहकारी समितियों के उप रजिस्ट्रार[4] मामले में मद्रास उच्च न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया। वहां यह माना गया कि यह केवल उस मामले में था जहां धारा 49 के प्रावधान लागू नहीं थे, धारा 51 का सहारा लिया जा सकता था। ऐसे मामले में, जहां कोई मामला धारा 49 और 51 दोनों के अंतर्गत आता है, दोनों प्रावधानों पर काम करने का इरादा नहीं था। चूंकि धारा 51 ने सिविल न्यायालयों के क्षेत्राधिकार को बाहर रखा है, इसलिए इसे सख्ती से समझा जाना चाहिए और इस कारण से, ऐसे मामलों में जहां धारा 49 लागू थी , धारा 51 को बाहर रखा जाएगा। इसके अलावा, यह माना गया कि

[4] आई.एल.ऐ.आर. (1957) मैड 371 : ए दरभंगा 1957 मद्रास 684

धारा 51 विभिन्न प्रकार के मामलों के लिए सामान्य प्रकृति का था और यह उन पक्षों के बारे में लगभग संपूर्ण था जिनके बीच और साथ ही सहकारी समितियों में उत्पन्न होने वाले विवाद भी शामिल थे। दूसरी ओर धारा 49 विशेष प्रकार के विवादों से निपटती है जो असाधारण परिस्थितियों में उत्पन्न होते हैं, जिन्हें धारा 51 के तहत निपटाए गए बड़े समूह से अलग किया जाता है। जब इस प्रकार दोनों खंडों की शर्तों का अतिरेक हुआ तो धारा 49 के प्रावधान ही लागू होगा। तर्क की इस पंक्ति के आधार पर, विद्वान वकील की प्रस्तुति यह थी कि वर्तमान मामले में दावा 'सोसायटी के प्रबंधन में एक व्यक्ति के खिलाफ' और 'धोखाधड़ी से धन या सोसायटी की अन्य संपत्ति को अपने पास रखने के लिए' था और इसलिए, यह पूरी तरह से धारा 49 द्वारा कवर किया गया था और इसके परिणामस्वरूप रजिस्ट्रार को अधिनियम की धारा 51 के तहत उप रजिस्ट्रार द्वारा जांच का निर्देश देने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। हालाँकि, यह तर्क धारा 49(1) के अनुप्रयोग के लिए एक और आवश्यक शर्त की अनदेखी पर आगे बढ़ता है। विद्वान वकील ने जिन दो कारकों का उल्लेख किया है और जिन्हें हमने अभी निर्धारित किया है, उनके अलावा, एक और शर्त भी है जिसे धारा 49(1) लागू होने से पहले पूरा करना होगा। आरोप को जन्म देने वाले तथ्यों का खुलासा धारा 37 के तहत ऑडिट या धारा 38 के तहत जांच या धारा 39 के तहत निरीक्षण या सोसायटी के समापन पर किया जाना चाहिए। श्री राम रेड्डी ने इस बात पर कोई विवाद नहीं किया कि जब तक यह शर्त पूरी नहीं हो जाती, तब तक धारा 49 लागू नहीं होगी, तथापि, उन्होंने प्रस्तुत किया कि अधिक्रमण से पहले धारा 38 के तहत एक जांच हुई थी और परिणामस्वरूप शर्त पूरी की गई थी। यह सच है कि धारा 38 के तहत सोसायटी के मामलों की जांच की गई थी, लेकिन वह अपने आप में पर्याप्त नहीं है। यह साबित करना होगा कि दावे में कथित तथ्य, और जिस पर यह आधारित है, उस जांच में

खुलासा किया गया था। इसे केवल तभी साबित या स्थापित किया जा सकता है जब रजिस्ट्रार को सौंपी गई जांच रिपोर्ट अदालत के समक्ष रखी गई थी और उसमें बताए गए तथ्य दावे के बयान में कथित तथ्यों के अनुरूप थे। श्री राम रेड्डी ने स्वीकार किया कि जांच रिपोर्ट न्यायालय के समक्ष नहीं थी और यह कार्यवाही के रिकॉर्ड में नहीं है। इसलिए, यह कहना संभव नहीं है कि धारा 38 के तहत जांच के परिणामस्वरूप उस रिपोर्ट में प्रकट किए गए तथ्यों और दावे के बयान में पाए गए तथ्यों के बीच पत्राचार है, जिसे रजिस्ट्रार ने धारा 51 के तहत मध्यस्थता के लिए उप रजिस्ट्रार को भेजा था। इसलिए, यह माना जाना चाहिए कि मामला अधिनियम की धारा 49 के अंतर्गत नहीं आता है। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि यदि धारा 49 लागू नहीं होती है, तो अवैधता के बारे में अन्य तर्क के अधीन, जिसका हम विज्ञापन करेंगे, धारा 51 के तहत कार्यवाही करने वाले रजिस्ट्रार के आदेश पर आपत्ति नहीं की जा सकती है। इसलिए, इस पहले बिंदु को अस्वीकार करना होगा।"

मद्रास सहकारी सोसायटी अधिनियम, 1931 की उपरोक्त धाराएँ 49 और 51 निम्नानुसार चलती हैं :

"49. (1) जहां धारा 37 के तहत ऑडिट के दौरान या धारा 38 के तहत जांच या धारा 39 के तहत निरीक्षण या किसी सोसायटी के समापन के दौरान ऐसा प्रतीत होता है कि कोई भी व्यक्ति जिसने संगठन में भाग लिया है या सोसायटी के प्रबंधन या सोसायटी के किसी पूर्व या वर्तमान अधिकारी ने किसी भी धन या अन्य संपत्ति का दुरुपयोग किया है या धोखाधड़ी से अपने पास रखा है या सोसायटी के संबंध में विश्वास के उल्लंघन का दोषी है, रजिस्ट्रार, अपने स्वयं के प्रस्ताव पर या परिसमापक की समिति या किसी लेनदार या अंशदाता के आवेदन पर , ऐसे व्यक्ति या अधिकारी के आचरण की जांच करेगी और उसे धन या संपत्ति या उसके किसी भी हिस्से पर ब्याज के साथ ऐसी दर पर

जो रजिस्ट्रार उचित समझता है या गलत विनियोग, धोखाधड़ी से प्रतिधारण या 'विश्वास के उल्लंघन' के संबंध में मुआवजे के रूप में समाज की संपत्ति में ऐसी राशि का योगदान करना जैसा रजिस्ट्रार उचित समझता है।

(2) उप-धारा (i) के तहत रजिस्ट्रार का आदेश तब तक अंतिम होगा जब तक कि इसे उस क्षेत्र पर अधिकारक्षेत्र रखने वाले जिला न्यायालय द्वारा रद्द नहीं किया जाता है जिसमें सोसायटी का मुख्यालय स्थित है या यदि सोसायटी का मुख्यालय मद्रास शहर में स्थित है, तो सिटी सिविल कोर्ट द्वारा आदेश की प्राप्ति की तारीख से तीन महीने के भीतर पीड़ित पक्ष द्वारा किए गए आवेदन पर आवेदन किया जा सकता है

धारा 51 इस प्रकार है;

"मध्यस्थता करना ;

विवाद: 51. यदि किसी पंजीकृत सोसायटी के व्यवसाय से संबंधित कोई विवाद (सोसाइटी या उसकी समिति द्वारा सोसायटी के वेतनभोगी सेवक के खिलाफ की गई अनुशासनात्मक कार्रवाई से संबंधित विवाद के अलावा) उत्पन्न होता है-

(a)

(b)

(c) सोसायटी या उसकी समिति और किसी पिछली समिति, किसी अधिकारी, एजेंट या नौकर, या किसी पूर्व अधिकारी, पिछले एजेंट या पिछले नौकर, या किसी मृत अधिकारी, मृत एजेंट या मृत नौकर के नामित, उत्तराधिकारी या कानूनी प्रतिनिधियों के बीच , समाज का, या

(2) रजिस्ट्रार, ऐसे संदर्भ की प्राप्ति पर, -

(a) विवाद का निर्णय स्वयं करें, या

(b) इसे किसी ऐसे व्यक्ति को निपटान के लिए हस्तांतरित करें जिसे (प्रांतीय सरकार) द्वारा इस संबंध में शक्तियां प्रदान की गई हैं, या

(c) ऐसे नियमों के अधीन, जो निर्धारित किए जा सकते हैं, इसे किसी मध्यस्थ या मध्यस्थता के निपटान के लिए संदर्भित करें।"

इसी प्रकार, पंजाब सहकारी अधिनियम, 1961 (संक्षेप में पंजाब अधिनियम) की धारा 54 और 55 के कथित अनुरूप प्रावधान नीचे पुन: प्रस्तुत किए गए हैं: -

"54. अधिभार,–(1) यदि ऑडिट, पूछताछ, निरीक्षण या किसी सहकारी समिति के समापन के दौरान यह पाया जाता है कि कोई व्यक्ति, जिसे ऐसी समिति का संगठन या प्रबंधन सौंपा गया है या जो किसी भी समय सोसायटी का अधिकारी या कर्मचारी रहा हो, इस अधिनियम, नियमों या उपनियमों के विपरीत कोई भुगतान किया हो या ट्रस्ट के उल्लंघन या जानबूझकर लापरवाही के कारण सोसायटी की संपत्ति में कोई कमी की हो या ऐसी सोसायटी से संबंधित किसी भी धन या अन्य संपत्ति का दुरुपयोग किया है या धोखाधड़ी से अपने पास रखा है, तो रजिस्ट्रार अपनी इच्छा से या समिति, परिसमापक या किसी लेनदार के आवेदन पर स्वयं जांच कर सकता है या इस संबंध में लिखित आदेश द्वारा उसके द्वारा प्राधिकृत किसी भी व्यक्ति को ऐसे व्यक्ति के आचरण की जांच करने का निर्देश देना;

नोट :–हरियाणा अधिनियम 13, 1971 द्वारा प्रावधान हटा दिया गया।

(2) जहां उप-धारा (1) के तहत कोई जांच की जाती है, रजिस्ट्रार, संबंधित व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देने के बाद, उसे पैसे या संपत्ति या उसके किसी भी हिस्से को ब्याज

सहित चुकाने या बहाल करने के लिए आदेश दे सकता है। ऐसी दर पर, या उस सीमा तक योगदान और लागत या मुआवजे का भुगतान करना, जिसे रजिस्ट्रार उचित और न्यायसंगत समझे।

अध्याय *VH1:* विवादों का निपटारा.

धारा 55. वे विवाद जिन्हें मध्यस्थता के लिए भेजा जा सकता है।- (1) तत्समय लागू किसी भी कानून में किसी बात के होते हुए भी, यदि किसी सहकारी समिति के संविधान, प्रबंधन या व्यवसाय से संबंधित कोई विवाद उत्पन्न होता है-

(a) सदस्यों, पूर्व सदस्यों और सदस्य, पूर्व सदस्यों और मृत सदस्यों के माध्यम से दावा करने वाले व्यक्तियों के बीच; या

(b) किसी सदस्य, पूर्व सदस्य या किसी सदस्य, पूर्व सदस्य या मृत सदस्य के माध्यम से दावा करने वाले व्यक्ति और सोसायटी, उसकी समिति या सोसायटी के किसी अधिकारी, एजेंट या कर्मचारी या परिसमापक, अतीत या वर्तमान के बीच; या

(c) सोसायटी या उसकी समिति और पिछली समिति, किसी अधिकारी, एजेंट या कर्मचारी, या किसी पूर्व अधिकारी, पिछले एजेंट या कर्मचारी या नामांकित व्यक्ति, किसी मृत अधिकारी, मृत एजेंट, या सोसायटी के मृत कर्मचारी के उत्तराधिकारी या कानूनी प्रतिनिधियों के बीच; या

(d) सोसायटी और किसी अन्य सहकारी सोसायटी के बीच, एक सोसायटी और दूसरी सोसायटी के परिसमापक के बीच या एक सोसायटी के परिसमापक और दूसरी सोसायटी के परिसमापक के बीच; ऐसे विवादों को निर्णय के लिए रजिस्ट्रार के पास

भेजा जाएगा और किसी भी अदालत को ऐसे विवाद के संबंध में किसी मुकदमे या अन्य कार्यवाही पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र नहीं होगा।

(2) उपधारा (1) के प्रयोजनों के लिए निम्नलिखित को सहकारी समिति के गठन, प्रबंधन या व्यवसाय से संबंधित विवाद माना जाएगा, अर्थात्

(a) मृत सदस्य के उत्तराधिकारियों या कानूनी प्रतिनिधियों से किसी ऋण या मांग के लिए सोसायटी द्वारा दावा , चाहे ऐसा ऋण या मांग स्वीकार की जाए या नहीं;

(b) किसी सोसायटी द्वारा मुख्य देनदार के खिलाफ दावा, जहां सोसायटी ने किसी ऋण या उससे देय मांग के संबंध में ज़मानतकर्ता से कोई राशि वसूल कर ली है;

(c) मूल देनदार की चूक के परिणामस्वरूप मूल देनदार, चाहे ऐसा ऋण या मांग स्वीकार की गई हो या नहीं;

(d) सोसायटी के किसी पदाधिकारी के चुनाव के संबंध में उत्पन्न कोई विवाद।

(3) यदि कोई प्रश्न उठता है कि क्या इस धारा के तहत रजिस्ट्रार को भेजा गया कोई विवाद किसी सहकारी समिति के संविधान, प्रबंधन या व्यवसाय से संबंधित विवाद है या नहीं, तो उस पर रजिस्ट्रार का निर्णय अंतिम होगा और उसे किसी भी न्यायालय में बुलाया नहीं जाएगा।.

(4) सोसायटी के किसी अधिकारी के चुनाव के संबंध में उत्पन्न होने वाले किसी भी विवाद पर रजिस्ट्रार द्वारा तब तक विचार नहीं किया जाएगा जब तक कि उसे चुनाव के परिणाम की घोषणा की तारीख से तीस दिनों के भीतर उसे नहीं भेजा जाता है।

(5) ए. ऋण सदस्यों की वसूली. -यदि रजिस्ट्रार के ध्यान में यह आता है कि सहकारी समिति के किसी सदस्य ने निर्धारित अवधि के भीतर अपना बकाया ऋण नहीं चुकाया है

और धारा 55 के तहत कोई संदर्भ नहीं दिया गया है, तो वह मामले की जांच या तो स्वयं या उसके द्वारा लिखित रूप से अधिकृत किसी व्यक्ति के माध्यम से कर सकता है।

(2) ब्याज सहित ऋण की राशि की वसूली के लिए एक प्रमाण पत्र जारी करने का आदेश पारित कर सकता है :

बशर्ते कि ऐसा कोई आदेश तब तक पारित नहीं किया जाएगा जब तक कि इससे प्रभावित व्यक्तियों को मामले में सुनवाई का उचित अवसर नहीं दिया गया हो।

(3) रजिस्ट्रार द्वारा उपधारा (1) के तहत कार्रवाई शुरू करने के बाद धारा 55 के तहत किसी भी संदर्भ पर विचार नहीं किया जाएगा।

(7) पेंटाकोटा श्रीरामुला मामले *(सुप्रा)* में मामला मद्रास उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ उच्चतम न्यायालय में आया था ,जिसमें मद्रास उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 49 और 51 की व्याख्या इस आशय से की थी कि यदि विवाद धारा 49 के अंतर्गत आता है **तो** धारा 51 के तहत कार्यवाही करने वाला रजिस्ट्रार का आदेश अमान्य है **। उस उच्च न्यायालय ने यह भी विचार किया कि जब दोनों धाराओं की शर्तों में ओवरलैपिंग हो, तो धारा 49** के प्रावधान ही लागू होंगे। ।सुप्रीम कोर्ट में अपीलकर्ता के वकील ने मुख्य रूप से उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क पर तर्क उठाया और वकील द्वारा यह तर्क दिया गया कि सोसायटी के प्रबंधन में एक व्यक्ति के खिलाफ और धोखाधड़ी से धन या अन्य संपत्ति को अपने पास रखने का दावा किया गया है। सोसायटी पूरी तरह से धारा 49 के तहत कवर की गई थी और परिणामस्वरूप, रजिस्ट्रार के पास अधिनियम की धारा 51 के तहत उप रजिस्ट्रार द्वारा जांच

का निर्देश देने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था और परिणामस्वरूप, रजिस्ट्रार के पास अधिनियम की धारा 51 के तहत उप रजिस्ट्रार द्वारा जांच का निर्देश देने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। सुप्रीम कोर्ट ने इस तर्क को खारिज कर दिया क्योंकि धारा 49(1) लागू होने से पहले एक और शर्त पूरी करनी होगी। शर्त यह थी कि धारा 37 के तहत ऑडिट या धारा 38 के तहत जांच या धारा 39 के तहत निरीक्षण या सोसायटी के समापन पर आरोप को जन्म देने वाले तथ्यों का खुलासा करना होगा। आगे यह माना गया कि मामला उपरोक्त किसी भी धारा यानी 37, 38 और 39 के तहत या सोसायटी द्वारा दावे में कथित तथ्यों के अनुसार सोसायटी के समापन के कारण उत्पन्न नहीं हुआ था। धारा 49 लागू नहीं थी और रजिस्ट्रार द्वारा अधिनियम की धारा 51 के तहत विवाद को सही ढंग से निपटाया गया था। इस के अलावा, सुप्रीम कोर्ट ने यह भी माना कि ऐसे व्यक्ति के खिलाफ विवाद जो सोसायटी का प्रबंधन कर रहा है और जो धोखाधड़ी से सोसायटी के धन या संपत्ति को अपने पास रखता है, निश्चित रूप से सोसायटी के व्यवसाय को छूने वाला विवाद होगा और इस प्रकार, धारा 51 के प्रावधानों को सही तरीके से लागू किया गया था।

(8) अब यदि हमारे पास मद्रास अधिनियम की उपरोक्त धारा 49 और 51 को पंजाब अधिनियम की धारा 54 और 55 के साथ एक संयुक्त वाचन है, तो यह सच है कि वे कुछ हद तक समान हैं, लेकिन मद्रास अधिनियम के तहत सख्ती से नहीं। मद्रास अधिनियम के तहत किसी पीड़ित व्यक्ति को न्यायिक प्रकृति के जिला न्यायालय के समक्ष उपचार उपलब्ध है, जबकि पंजाब अधिनियम के तहत ऐसा कोई प्रावधान नहीं है। जैसा कि ओम प्रकाश चोपड़ा *(सुप्रा)* और जय पाल के ओसेस *(सुप्रा)* में देखा गया है, यह कहना सही नहीं है कि प्रावधान समान हैं। इन दोनों मामलों का निर्णय इस धारणा पर किया गया है और दूसरे पक्ष द्वारा स्वीकार किया गया है कि कार्यवाही क्रमशः ऑडिट रिपोर्ट या स्टॉक के सत्यापन में पाई गई कमी के आधार पर शुरू की गई थी।

(9) अब यह देखना होगा कि सुप्रीम कोर्ट का उपरोक्त फैसला मौजूदा मामले के तथ्यों पर किस हद तक लागू होता है और क्या पंजाब अधिनियम की धारा 54 या 55 के प्रावधान लागू होंगे। यह स्पष्ट किया जाता है कि सुप्रीम कोर्ट ने पक्षों की **दलीलों** और रजिस्ट्रार के समक्ष सोसायटी द्वारा किए गए दावे पर विचार करने के बाद कहा था कि ऐसी स्थिति में, मामला पूरी तरह से धारा 49 के तहत नहीं आएगा और परिणामस्वरूप धारा 51 के तहत कार्यवाही को आपत्ति के लिए खुला नहीं माना गया । अब यदि उपरोक्त मामले में शीर्ष न्यायालय की इन टिप्पणियों को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू किया जाता है, तो यह बिल्कुल स्पष्ट है कि श्री शर्मा द्वारा उठाया गया विवाद भ्रामक है क्योंकि नीचे के अधिकारियों के समक्ष ऐसी कोई याचिका नहीं उठाई गई थी जैसा कि विवादित आदेशों से स्पष्ट है । बेशक, आधे-अधूरे मन से इसे पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष उठाया गया था, लेकिन रिकॉर्ड पर ऐसा कोई तथ्य नहीं रखा गया था जिससे यह पता चले कि केवल ऑडिट रिपोर्ट के आधार पर याचिकाकर्ता पर दायित्व तय किया गया था। हैरानी की बात यह है कि इस रिट याचिका में भी ऐसी कोई दलील नहीं दी गई है । अकेले इस आधार पर, याचिकाकर्ता इस विलंबित चरण में बहस के दौरान पहली बार यह याचिका (जो तथ्यों पर आधारित है) उठाने का हकदार नहीं है, खासकर जब वर्तमान रिट याचिका दायर करने में पुनरीक्षण प्राधिकारी के आदेश की तिथि से 14 महीने से अधिक की अत्यधिक देरी हो ।

(10) अब यदि उपरोक्त मामले में शीर्ष न्यायालय की इन टिप्पणियों को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू किया जाता है, तो यह बिल्कुल स्पष्ट है कि श्री शर्मा द्वारा उठाया गया विवाद भ्रामक है क्योंकि नीचे के अधिकारियों के समक्ष ऐसी कोई याचिका नहीं उठाई गई थी जैसा कि विवादित आदेशों से स्पष्ट है । बेशक, आधे-अधूरे मन से इसे पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष उठाया गया था, लेकिन रिकॉर्ड पर ऐसा कोई तथ्य नहीं रखा गया था जिससे यह पता चले कि केवल ऑडिट रिपोर्ट के आधार पर याचिकाकर्ता पर दायित्व तय किया गया था। हैरानी की बात

यह है कि इस रिट याचिका में भी ऐसी कोई दलील नहीं दी गई है । अकेले इस आधार पर, याचिकाकर्ता इस विलंबित चरण में बहस के दौरान पहली बार यह याचिका (जो तथ्यों पर आधारित है) उठाने का हकदार नहीं है, खासकर जब वर्तमान रिट याचिका दायर करने में पुनरीक्षण प्राधिकारी के आदेश की तिथि से 14 महीने से अधिक की अत्यधिक देरी हो ।

(11) भले ही याचिकाकर्ता की ओर से इस दलील को तर्क के लिए नजरअंदाज कर दिया जाए, फिर भी इसमें कोई विवाद नहीं है कि गनौर सहकारी समिति (प्रतिवादी नंबर 4) ने एक मध्यस्थता विवाद उठाया था, जिसका निर्णय, हालांकि मध्यस्थ द्वारा सोसायटी के खिलाफ किया गया था। आदेश दिनांक 24 दिसंबर, 1981 (अनुलग्नक पी-7) द्वारा याचिकाकर्ता ने खुद यह तर्क देते हुए बरी कर दिया कि अधिनियम की धारा 55 के तहत मध्यस्थता की कार्यवाही पहले से ही मध्यस्थ के पास लंबित थी और आपराधिक कार्यवाही एक साथ नहीं चल सकती थी। इसी तरह, उन्होंने इस आधार पर चेतावनी की सजा का एक हल्का पुरस्कार प्राप्त किया कि धारा 55 के तहत मध्यस्थता की कार्यवाही मध्यस्थ के समक्ष लंबित थी। सभी विवादित आदेशों में भी, यह विशेष रूप से उल्लेख किया गया है कि याचिकाकर्ता के खिलाफ पंजाब सहकारी अधिनियम 1961 की धारा 55/56 के तहत सोसायटी द्वारा मध्यस्थता कार्यवाही शुरू की गई थी। इस प्रकार, रिकॉर्ड पर इन सभी तथ्यों की चर्चा से, अपरिहार्य तथ्यात्मक निष्कर्ष यह है कि गन्नौर सहकारी समिति (प्रतिवादी संख्या 4) ने एक संदर्भ की मांग की थी और पंजाब सहकारी सोसायटी अधिनियम, 1961 की धारा 55, 56 के तहत याचिकाकर्ता के खिलाफ मध्यस्थता कार्यवाही शुरू की थी ।

(12) जैसा कि ऊपर दिया गया है, याचिकाकर्ता के खिलाफ आरोपों को देखने से यह भी पता चलेगा कि यह सहकारी समिति के प्रबंधन या व्यवसाय से संबंधित एक विवाद था जिसे याचिकाकर्ता (सोसायटी के एक पूर्व प्रबंधक) ने धोखाधड़ी से बरकरार रखा और सोसायटी की संपत्ति गबन किया था।

(13) जय पाल और ओम प्रकाश चोपड़ा का मामला (सुप्रा) उच्च न्यायालय के समक्ष निर्विवाद तथ्यों पर तय किया गया था, बल्कि दूसरे पक्ष द्वारा स्पष्ट रूप से स्वीकारोक्ति से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि, अधिनियम की धारा 54 आकर्षित होती है। लेकिन वर्तमान मामले में यह स्थिति नहीं है और उक्त निर्णय का अनुपात मौजूदा मामले पर लागू नहीं होता है। इन दो मामलों का निर्णय करते समय, माननीय न्यायाधीशों ने ऊपर चर्चा की गई किसी अन्य स्थिति के अस्तित्व के बारे में सर्वोच्च न्यायालय की सभी टिप्पणियों को लेने की आवश्यकता महसूस नहीं की। सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणियों के मद्देनजर पंजाब अधिनियम के अध्याय आठ की धारा 48 (ऑडिट), 49 (सोसाइटियों का निरीक्षण) 50 (रजिस्ट्रार द्वारा पूछताछ), 51 (ऋणग्रस्त सोसाइटियों की पुस्तकों का निरीक्षण) पर उपरोक्त एकल पीठ के निर्णयों पर विचार नहीं किया गया है।

(14) यदि उपरोक्त धाराओं के तहत कार्यवाही के दौरान धोखाधड़ी, गबन या कमी की कुछ अवैधता पाई जाती है और एकत्र की गई आपराधिक सामग्री को सोसायटी द्वारा अपने दावे में एकमात्र आधार बनाया जाता है, तो निश्चित रूप से, यह कहा जा सकता है कि धारा 54 लागू होगी। लेकिन यदि उपरोक्त धाराओं के तहत विचार की गई किसी भी कार्यवाही के दौरान एकत्र किए गए तथ्यों को समाज द्वारा किए गए दावे में नहीं रखा जाता है, तो धारा 55 लागू होगी। उदाहरण के लिए, यदि सोसायटी संदर्भ चाहती है और मध्यस्थता कार्यवाही के दौरान, यह कुछ ऑडिटर निरीक्षण रिपोर्ट, या अन्य सबूतों के साथ-साथ कुछ अन्य जांच रिपोर्ट पर निर्भर करती है, तो यह नहीं कहा जा सकता है कि उस स्थिति में, मामला खत्म हो जाएगा। केवल अधिनियम की धारा 54 के तहत कवर करने योग्य होगा। यदि इस तरह के दृष्टिकोण को इस न्यायालय के उपरोक्त दो निर्णयों में शामिल किया गया था , तो वे पेंटाकोटा श्रीरामुला मामले (सुप्रा) में सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों के विपरीत हैं।

(15) यद्यपि हमने इस न्यायालय के उपरोक्त दो निर्णयों की सत्यता के बारे में कुछ संदेह व्यक्त किया है, फिर भी 'ऊपर चर्चा के अनुसार, हम ऐसा करने से बचेंगे क्योंकि मौजूदा मामले के उचित निर्णय के लिए इसकी आवश्यकता नहीं है। पेंटाकोटा श्रीरामुला मामले *(सुप्रा)* में सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणियाँ पूरी तरह से मामले के तथ्यों पर लागू होती हैं और हम मानते हैं कि मध्यस्थता कार्यवाही के संदर्भ में सोसायटी द्वारा सही दावा किया गया था और पंजाब अधिनियम के धारा 55/56 के संदर्भ में रजिस्ट्रार द्वारा ऐसा आदेश दिया गया था।

(16) परिणामस्वरूप, ऊपर दर्ज विस्तृत कारणों से रिट याचिका को जुर्माने सहित खारिज करने का आदेश दिया जाता है। लागत 1,000 रुपये में निर्धारित की गई है जिसका भुगतान केवल प्रतिवादी संख्या 4 को किया जाएगा।

आर.एन.आर.

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यवहारिकऔर आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अँग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

Checked By:

Ravleen Kaur

Trainee Judicial Officer

Chandigarh Judicial Academy,

Chandigarh